तब नारायनजीऐं कियो प्रवेस, देखाई माया लवलेस।
फिरी सुरत आए नारायन, याद आवते गए निसान।।१४।।

तब नारायणजी ने प्रवेश कर माया का छोटा स्वरूप (आकार) दिखाया। नारायणजी के आने पर मार्कण्डेय सावचेत हुए और उन्हें मूल स्थान की याद आई।

याद आया सरूप बैठा जांहें, तब उड़ गई माया जानों हती नांहें।
जाग देखे तो सोई ताल, बीच मायाऐं कियो ऐसो हाल।।१५।।

उसे मार्कण्डेय ताल याद आया जहां से बैठकर देख रहा था और तब माया उड़ गई। ऐसा लगा मानो माया थी ही नहीं। जागकर उसने देखा, तो वही वह ताल है और बीच में माया ने बेसुध कर दिया था।

माया की तो एह सनंध, निरमल नेत्रे होइए अंध।
ता कारन कियो प्रकास, तारतम को जो उजास।।१६।।

माया की तो यही हकीकत है कि आंखों से देखते हुए भी अन्धे हो जाते हैं। इस वास्ते ही यह दृष्टान्त दिया है जिससे तुम्हें तारतम की पहचान हो जाए।

सो ए लेके आए धनी, दया आपन ऊपर है घनी।
जाने देखसी माया न्यारे भए, तारतम के उजियारे रहे।।१७।।

इसी तारतम ज्ञान को लेकर धनी आए हैं और अपने ऊपर बड़ी कृपा की है। हमने समझा था कि हम तारतम ज्ञान के उजाले के हो जाने से माया को माया से जुदा होकर देखेंगे।

भले तारतम कियो प्रकास, देखाया माया में अखंड विलास।
तारतम वचन उजाला कस्या, दूजा देह माया में धस्या।।१८।।

हे धनी! आपने तारतम वाणी से हमें अच्छा ज्ञान दिया है जिससे माया में बैठे होने पर भी हमें अखण्ड परमधाम के आनन्द दिखलाए। तारतम वाणी से ही यह ज्ञान हुआ कि धनी हमारे वास्ते दूसरा तन धारण कर माया में आए हैं।

।। प्रकरण ।। ९ ।। चौपाई ।। २२३ ।।

सुन्दरसाथ की विनती

साखी–

विनती एक सुनो मेरे प्यारे, कहूं पिउजी बात।
आए प्रगटे फेर कर, करी कृपा देख अपन्यात।।१।।

हे मेरे धनी ! मैं विनती करती हूं। मेरी एक बात सुनो। आपने अपनी समझ कर कृपा की है और दुबारा प्रगट हुए हैं।

श्री देवचन्दजी हम कारने, निध तुमारे हिरदे धरी।
वचन पालने आपना, साथ सकल पर दया करी।।२।।

सुन्दरसाथ कहते हैं कि श्री देवचन्द्रजी ने हमारे वास्ते यह न्यामत तारतम वाणी आपके हृदय में दी है। वायदों को पूर्ण करने के लिए ही सुन्दरसाथ पर मेहर की है और आपके हृदय में आ विराजे हैं।

जनम अंध जो हम हते, सो तुम देखीते किए।
पीठ पकड़ हम ना सके, सो फेर कर पकर लिए।। ३ ।।

हम जब से माया में आए हैं तभी से अज्ञानी थे। आपने ज्ञान देकर जानकार बना दिया। हम तो आपका पीछा नहीं कर सके (माया में ही डूबने लगे थे) पर आपने हाथ पकड़कर माया से बाहर निकाल लिया।

अब जो कछूए हम में, होसी मूल अंकूर।
जो नींद उड़ाए तुम निध दई, सो क्योंए ना छोडूं पिया नूर।। ४ ।।

अब हमारे अन्दर परमधाम की जो आत्माए होंगी, उनकी अज्ञानता (नींद) हटाकर जो ज्ञान आप दे रहे हो, हे पिया ! आपके इस ज्ञान (नूर) को क्यों छोड़ेंगे? अर्थात् नहीं छोड़ेंगे।

पेहेले तो हम न पेहेचाने, सो सालत है मन।
चरचा कर कर समझाए, कहे विध विध के वचन।। ५ ।।

पहले तो हमने आपकी पहचान नहीं की। वह अभी तक मन में चुभ रही है। आपने चर्चा करके तरह-तरह के वचनों से हमें समझाया था।

ऐसे अनेक वचन कहे हमको, जिन एक वचने पेहेचाने तुमको।
चाल– तुम दई पेहेचान विध विध कर, पर निरोध बैठा हिरदा पकर।। ६ ।।

आपने तो ऐसे अनेक वचन हमको कहे थे कि जिनमें से एक वचन से आपकी पहचान हो जाती। आपने तरह-तरह से अपनी पहचान कराने के उपाय भी किए, परन्तु मन हृदय को पकड़ कर बैठ गया और आपकी पहचान न कर पाए।

तब हंस कर आंझू आनके कह्या, पर तिन समे हम कछु ए ना लह्या।
तब तारतम केहे देखाया घर, हम तो भी ना सके पेहेचान कर।। ७ ।।

तब आपने हंसकर और रोकर भी कहा, पर उस समय भी हमने कुछ नहीं लिया। तब आपने तारतम कहकर घर की पहचान कराई, तो भी हम पहचान नहीं कर पाए।

तब हममेंसे अद्रष्ट भए, कोई कोई वचन हिरदे में रहे।
जो या समें खबर ना लेते तुम, तो मोहजल अति दुख पावते हम।। ८ ।।

तब आप हमसे अलग हुए। अब उस समय के कोई-कोई वचन हृदय में याद आते हैं। इस समय यदि आप हमारी खबर न लेते तो इस माया के चक्कर में हम वहुत दुःखी होते।

यों जान के आए हम मांहें, आए बैठे प्रगटे तुम जांहें।
ज्यों आपन पेहेले बृज में हते, नित प्रते पियासों प्रेमें खेलते।। ९ ।।

ऐसा जानकर कि आप हमारे बीच में आए हैं। जैसे पहले श्री देवचन्द्रजी के तन में बैठते थे वैसे ही मेहराज ठाकुर के तन में बैठे हैं। ठीक उसी तरह जैसे बृज में हम पियाजी से नित्य ही प्रेम में खेलते थे।

अनेक खेल किए आपन, पूरन मनोरथ सब किए तिन।
अग्यारे बरस लो लीला करी, कालमाया इतही परहरी।। १० ।।

हमने बृज में तरह-तरह की चाहना की जिसे धनी ने पूरा किया। तरह-तरह से ग्यारह बर्ष तक खेल खेले और फिर कालमाया को छोड़ दिया। ब्रह्माण्ड का प्रलय हो गया।

जोगमाया कर रास जो खेले, कई सुख साथ लिए पिउ भेले।
करी अंतराए देने को याद, हम दुख मांग्या पिउपे आद।। ११ ।।

योगमाया के ब्रह्माण्ड की रचना करके वृन्दावन में रास की लीला की और प्रीतम के साथ में कई सुख लिए। धनी अन्तर्ध्यान हुए। यह याद दिलाने के लिए कि परमधाम में हमने पिया से दुःख का खेल मांगा था।

सोई देख के आए ज्यों, फेर अब प्रगट हुए हैं त्यों।
धनी जब करें अपन्यात, मनचाह्या सुख देवें साख्यात।। १२ ।।

रास में अन्तर्ध्यान के बाद जैसे धनी दुबारा आए थे, वैसे ही अब भी धनी उसी तरह से प्रगट हुए हैं। धनी जब अपना जानकर सुन्दरसाथ को अपनाते हैं तो मनचाहे साक्षात् सुख देते हैं।

तिन समें धाख रहीती जोए, अब इत सुख देत हैं सोए।
अब सुनो पिउ कहूं गुन अपने, अवगुन मेरे हैं अति घने।। १३ ।।

अब श्री इन्द्रावतीजी कहती हैं, हे धनी ! श्री देवचन्द्रजी के समय में मेरी जो परमधाम देखने की इच्छा बाकी रह गई थी, वह सुख धनी मुझे अब दे रहे हैं। हे धनी ! अब मैं अपने गुण कहती हूं। मेरे अन्दर अपार अवगुण भरे हैं।

तुमारे मन में न आवे लवलेस, पर मैं जानों मेरे मन के रेस।
वार डारों तुम पर मेरी देह, तुम किए मोसों अधिक सनेह।। १४ ।।

आपके मन में तो भले ही मेरे अवगुण दिखाई न दें पर मेरे मन के रेशे-रेशे (नस-नस) में अवगुण ही अवगुण भरे हैं, यह मैं जानती हूं। इस पर भी आपने मेरे से बहुत प्यार किया, इसलिए मैं अपना तन आप पर कुर्बान करती हूं (वारी-वारी जाती हूं)।

घोली घोली मैं जाऊं तुम पर, उरिनी मैं होऊंगी क्यों कर।
उरिनी होना तो मैं कह्या, माया लेस हिरदे में रह्या।। १५ ।।

मैं आप पर बार-बार बलिहारी जाती हूं और सोचती हूं कि मैं आपके एहसान का बदला कैसे चुकाऊंगी ? एहसानों का बदला तो मैंने इसलिए कहा है क्योंकि माया में बैठी हूं।

अनेक बार मैं लेऊं वारने, तुम अपनी जान गुन किए घने।
मैं वार डारूं आतम अपनी, पर सालत सोई जो करी दुस्मनी।। १६ ।।

हे धनी ! आपने मुझे अपनी अंगना जानकर बहुत एहसान किए हैं। मैं अनेक बार वारी-वारी जाती हूं। मैं तो अपनी जान (आतम) भी कुर्बान कर देती, परन्तु मुझे वह मेरा दोष खटकता है कि मैंने आपका मुकाबला कर परमधाम देखने की जिद की।

क्यों छूटोंगी ए गुन्हे हो नाथ, सांची कहूं मेरे धाम के साथ।
तुम साथ मिने मोहे देत बड़ाई, पर मैं क्यों छूटोंगी बज्रलेपाई।। १७ ।।

धाम के साथ ! सुनो, मैंने अपने प्रीतम से जो गुनाह किया है उससे मैं कैसे बचूंगी ? हे धनी ! आप तो सुन्दरसाथ के बीच बड़ाई दे रहे हैं पर मैं अपने गुनाहों के वज्रलेप से कैसे छूटूंगी ?

तुम गुन किए मोसों अति घन, पर अलेखे मेरे अवगुन।
तुम गुन किए मोसों पेहेचान कर, मैं अवगुन किए माया चित धर।। १८ ।।

आपने तो मेरे ऊपर बहुत ही कृपा की है पर मेरे अन्दर अपार अवगुण हैं। आपने मुझे परमधाम का साथी पहचान कर कृपा की, परन्तु मैंने माया में चित्त लगाकर अवगुण किए।

अब बल बल जाऊं मेरे धनी, मेरे मन में हाम है घनी।
असत मंडल में हासल अति बड़ी, मैं पिउजी की उमेद ले खड़ी।। १९ ।।

अब बलि-बलि जाऊं मेरे धनी। मेरे मन में बहुत चाहना है। इस झूठे संसार में बहुत कुछ प्राप्त हो सकता है, इसलिए मैं ही आपको प्राप्त करूं। इसी उम्मीद पर मैं खड़ी हूं।

जो मनोरथ किए मांहें श्रीधाम, सो पूरन इत होए मन काम।
जो बिध सारी कही है तुम, सो सब द्रढ़ करी चाहिए हम।। २० ।।

जो मनोकामना (इच्छा) हमने परमधाम में की थी, वह सब यहीं पूरी हो गई। जो हकीकत आपने कही है वह हमें सब दृढ़ कर लेनी चाहिए।

सुख धाम के जो पाइए इत, सो काहूं मेरी आतम न देखे कित।
इन अंग की जुबां किन बिध कहे, जो सुख कहूं सो उरे रहे।। २१ ।।

जो परमधाम के सुख यहां मिलते हैं वह मेरी आत्मा को कहीं नहीं दिखाई देते। मेरे झूठे अंग की जबान कैसे कहे। सुख की जो बात कहती हूं वह बात सब इस माया में (निराकार के ब्रह्माण्ड में) ही रह जाती है।

ए सोभा सब्दातीत है धनी, और सब्द में जुबां आपनी।
ए सुख विलसूं होए निरदोस, होए फेरा सुफल दया तुम जोस।। २२ ।।

आपकी शोभा शब्दातीत (परमधाम) की है और मेरी जबान माया की है। यदि माया छूट जाए तो अखण्ड परमधाम के आनन्द लूं और आपकी कृपा से मेरा यहां आना सफल हो जाए।

इतने मनोरथ होंए पूरन, तब जानों दया हुई अति घन।
फेर फेर दया को तो कह्या घना, जो कर न सकी कछू बस आप अपना।। २३ ।।

इतनी चाहनाएं मेरी यहां पूरी हो जाएं तब जानूं कि मेरे ऊपर बड़ी कृपा हुई है। बार-बार जो आपकी मेहर को बड़ा कहती हूं वह इसलिए कि मैं अपने आपको वश में नहीं कर सकी (मैं स्वयं जागृत नहीं हो सकी)।

अब मनसा वाचा करमना कर, क्योंए न छोडूं अखंड घर।
नैनों निरखूं करी निरमल चित, रुदे राखूं पिउ प्रेमें हित।। २४ ।।

अब मन, वचन और कर्म से किसी तरह से भी अपने घर परमधाम को नहीं छोडूंगी। चित्त को माया से छुड़ाकर हृदय में पिया के प्रेम और स्नेह को लेकर परमधाम को देखूंगी।

कर परनाम लागूं चरने, करूं सेवा प्यार अति घने।
करूं दंडवत जीव के मन, देऊं प्रदखिना रात ने दिन।। २५ ।।

हे धनी ! जीव और मन से आपके चरणों में दण्डवत् प्रणाम करूं। आपकी रात-दिन परिकरमा करके अति प्यार से सेवा करूंगी।

कृपा करत हो साथ पर बड़ी, भी अधिक कीजो घड़ी घड़ी।
इंद्रावती पांउ परत आधार, धनी धाम के लई मेरी सार।। २६ ।।

सुन्दरसाथ पर आप बड़ी कृपा करते हो। और भी कृपा पल-पल करते रहना। श्री इन्द्रावतीजी धनी के चरणों में लगकर कहती हैं कि हे धनी! आपने मेरी अच्छी तरह सुध ली।

॥ प्रकरण ॥ १० ॥ चौपाई ॥ २४९ ॥